International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 2; March 2018; Page No. 31-35

कुमाउनी साहित्य में स्त्री विमर्श

कृष्ण चन्द्र
शोध छात्र (हिन्दी) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामनगर, नैनीताल सम्बद्ध कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत।

प्रस्तावना

आदिकाल से ही साहित्य समाज का दर्पण रहा है। वही समाज जिसकी आधी आबादी स्त्रियों की है। अतः समाज में रहने वाले साहित्यकारों के साहित्य में स्त्री, स्त्री विचार और स्त्री संवेदना का आना स्वाभाविक है। इसी स्त्री संवेदना से लगाव साहित्य को स्त्री विमर्श की ओर ले जाता है चाहे उस साहित्य का रचयिता पुरूष हो या स्वयं स्त्री। कुमाउनी साहित्य के मुख्यतः दो रूप दृष्टिगत होते हैं– लोक साहित्य एवं परिनिष्ठित साहित्य। कुमाउनी के परिनिष्ठित साहित्य के साक्ष्य पण्डित लोकरत्न पन्त गुमानी (1790–1846 ई0) की रचनाओं से मिलने आरम्भ होते हैं, किन्तु इनकी रचनाओं की प्रौढ़ता देखकर यह कहा जा सकता है कि इनसे पहले भी कुमाउनी की परिनिष्ठित काव्य परम्परा अवश्य रही होगी। परिनिष्ठित काव्य परम्परा को समय सीमा में बॉधना आसान है, किन्तु लोक–साहित्य परम्परा को नहीं। लोक–साहित्य परम्परा लिखित साहित्य परम्परा से पुरानी होती है। यही बात कुमाउनी पर भी लागू होती है। कुमाउनी लोक साहित्य का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि कुमाउनी भाषा का इतिहास। चाहे कुमाउनी का लोक साहित्य हो या परिनिष्ठित साहित्य दोनों में पहाड़ की नारी के जीवन दर्शन का प्रमुखता से चित्रण हुआ है। यहाँ नारी समाज की एक मात्र इकाई न होकर माँ–बहिन, पत्नी–प्रेमिका, विरहिणी–वीरांगना के साथ–साथ देवी के रूप में चित्रित की गई है।

कुमाउनी लोक साहित्य को स्त्री जीवन का साहित्य कह दिया जाय, तो अत्युक्ति न होगी। "पहाड़ का पानी और पहाड़ की जवानी पहाड़ के काम नहीं आती।" लोकोक्ति को चरितार्थ करता पहाड़ का अधिकांश युवा अपना आधा जीवन जीविका के प्रयास में प्रवास करते हुए परदेश में ही बिता देता है। उसके घर में रह जाती है तो अकेली बूढ़ी माँ, युवा पत्नी या प्रेमिका और बहिन के साथ बूढ़े पिता। बहिन ससुराल भी चली गई तो वह अपने भाई को नहीं भूलती कि चैत का महीना आयेगा तो सजा धजा मेरा भाई मायके से भिटौली लेकर मेरे घर ऑगन में जरूर पहुँचेगा और मेरे नाम की आवाज लगाएगा। लोक–साहित्य अनुभूत सत्य होता है। उसका एक–एक छन्द हृदय रस में आकण्ठ डूबा हुआ मानवीय संवेदना का गीत है। लोक गीतों ने विरह को वाणी प्रदान करने का कार्य किया चाहे वा न्यौली हो या झोड़ा अथवा कोई अन्य गीत। विधा प्रत्येक ने कहीं संयोग कहीं वियोग का आश्रय लेकर पहाड़ी नारी के कष्ट को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

"न्यौली का तो प्रमुख प्रतिपाद्य ही है– श्रृंगार है । संयोग में प्रियमिलन की आकुलता और छेड़छाड़ हास परिहास उपालंभ और वियोग में प्रोषित पति का अतल स्पर्शी पीड़ा का आधिक्य है। वियोग की सभी दशाओं का मार्मिक और सजीव वर्णन इन गीतों में मिलता है।"

पावस ऋतु आरम्भ हो गई है। प्रिय परदेश में है ऐसे में आकाश में बादलों के उमड़ते ही विरहिणी का हृदय सुबकने लगता है–

"ऊंचा धूरो सूका डाँडा पॉणी की तुडुक।
आकाश बादल रिट्या रवे ऊँची घुडुक।।"

किन्तु पहाड़ की नारी मेघदूत की यक्षिणी की भाँति विरह में कृश नहीं होती उसका प्रेम कर्मठ प्रेम हैं याद किसे नहीं आती कामना किसकी नहीं होती कि – 'पंख हुना उड़ि औनू मैं बिना पाखे को' यहाँ पहाड़ पुत्री का प्रेम केवल अपने प्रिय तक सीमित नहीं। अपितु कहीं व्यापक और विस्तीर्ण है उसके लिए माँ–पिता–भाई बालपन के साथी सभी अनन्य एवं प्रेमास्पद हैं।

न केवल 'न्यौलि' बल्कि जोड़ों में भी प्रिय से वियुक्त विरहिणी का एकाकी हृदय नैनीताल के ताल की भॉति भर आता है। रोना उसको नित्य आता है और हँसी तो उसके लिए स्वप्न हो गई है। संयोग की स्थिति जितनी सुखद है, वियोग की स्थिति उतनी ही असह्य। प्रेम में वियोगिनी की दशा ऐसी हो जाती है जैसे कि नदी की बीच धारा में कोई गिर गया हो। ना पार ही जाना हो पा रहा है ना वापस ही आया जाता है–

"दुतरी को तार,
बीच गंगा छोड़ि गेंछे, न वार न पार।"

नदी की भॉति छलकता पागल यौवन किसकी परवाह करता है? आखों के आगे तो सारी दुनिया घूमती है, पर हृदय में तो मात्र प्रियतम की मूर्ति की ही स्थापना हो सकती है। प्रवास को जाते प्रिय से विदा लेते वक्त प्रियतमा कहती है कि–

'अगर तुम मुझे भुलाने का प्रयत्न करोगे तो नथनी से तुम्हारी छाती पर ही (फाँसी) खा लूंगी'–

"बरत बरूंलो
नथुली ले फाँसो लगें, छात्यूनी मरूँलो"

कुमाऊँ के 'चाँचरी गीतों' में भी अनिवार्य रूप से स्त्रियों को स्थान मिला है यही नहीं बल्कि चाँचरी और झोड़ें तो गायन में भी बिना स्त्रियों के बिना अधूरे माने जाते हैं।

चाँचरी वहचाहे मणि–कम्पासी, देवू–डफैदान, बिसला–किटवा या 'साली–भीना', देवर–भाभी, प्रेमी–प्रेमिका, पति–पत्नी सम्बन्धित ही क्यों न हो सभी में पहाड़ी नारी के हृदय की धड़कन सुनी जा सकती है। पसीने के मोतियों से सजी और उधार के आभूषणों से घिरी प्रवासी पति की बाटुली हृदय में संजोए सर पर जिम्मेदारियों का पहाड़ लिए हुए कुमाऊँ की नारी के बोल हर गीत में सुने जा सकते हैं।

इन चाचरियों में नारी मन का उल्लास है। आकांक्षा है प्रिय–मिलन की, मन में लज्जा का भाव भी है और मानवीय मर्यादा का ख्याल भी। एक तो प्रियतम मायादार है उपर से उसकी सुन्दरता और भी

प्रियतमा को बैचेन कर डालती है। यहाँ उसका प्रेम मात्र एक स्त्री पुरूष का प्रेम न रहकर प्रकृति पुरूष का प्रेम बन जाता है। जहाँ एक नव ब्याहता किसी के सपने संजोकर उसकी याद में सालों बिता डालती है और न बुर्जुआ सास को शिकायत देती है और न नुकीली आंखों वाले समाज को। अपने को गला कर दूसरे को जीवन देने का काम दोनों ही कर सकते हैं या तो स्त्री या फिर प्रकृति।

कुमाउनी 'झोड़ों' में स्त्री धर्म किवाड़ खोलने वाली माता के रूप में आती है तो भेंट–पावट, धूप–दीप नगाड़ा, निशाण, छत्र और बलिदान ग्रहण कर अपने सन्तति को शुभाशीष देती है और साली के रूप में स्वच्छन्द प्रेमिका बनकर आती है तो अपनी हंसी ठिठोली से सारे घर–बण प्रदेश को गुंजायमान करती है। कहीं प्रियतमा बन कर पति आगमन का उल्लास मनाती है। तो कहीं उनके लौटने के दिनों को गिनगिन कर अपनी रूमाल आँसूओं से भिगाती हैं।

'छपेली' में एक मुख्य गायक तथा गायिका एवं नर्तक समूह होता था, पहले नर्तक स्त्री होती थी, किन्तु अब स्त्री का स्थान स्त्री वेशधारी पुरूष ने ले लिया है। छपेली में मुख्यतया प्रेम और श्रृंगारिक विषयों की प्रधानता रहती है। प्रेम में भावुकता निश्छलता एवं उद्दातता पायी जाती है। प्रश्नोत्तर प्रेमी–प्रेमिका अथवा दो गायकों के मध्य होते हैं। इनमें थोड़ी तार्किकता के साथ आशुवाक भी रहता है। श्रृंगार में सौन्दर्य वर्णन, अनुनय हास–परिहास, सहचर्य, संगसुख कामना, उन्मुक्तता आदि स्थितियाँ भी मिलती हैं।

छपेली में कुर्मांचली जीवन में प्रचलित बहुविवाह प्रथा का भी उल्लेख मिलता है साथ ही प्रेम में स्त्री की स्वीकृति को पुरूष की स्वीकृति से बड़ा माना गया है। नव–विवाहिता पत्नी की प्रसन्नता के लिए पति द्वारा बर्तन माँजने की घटना तक को कुमाउनी कवि गीत का रूप दे डालता है–

"त्यर मॉजियॉ भन नन्दना, म्यार नै ऊनामन।।
(ओहो) नंदि को नौकर नंदन सिंङा, माज नंदना भन।।"

छपेलियों में स्त्री सौन्दर्य को पूर्ण गरिमा प्रदान की गई है। नायक का नायिका से कहना कि–

"त्वील चायो सन्मुख, मैंल भरी पायो।" या
लायीं माया छोड़ि जाली, भुगतली हाल
मेरो हिया भरी ओंछ.....(सजना)
जसो नैनीताल,
हिरदी में बुड़ै गैछे
मौनी कसो साल।। त्यर मुख चान–चाना
आँखि है गे लाल।
राम गंगा की लमि नहर चौखुटी ऐरौपाणि।
तेरी सूरत देखि वे चंदा छुटि गे बूती धाणि।"

स्त्री के सौन्दर्य को चर–अचर सम्पूर्ण जीवन–जगत में व्याप्त माना गया है। साथ ही स्त्री का प्रेम पक्ष पुरूष के प्रेम पक्ष से भारी माना गया है।

यहाबैर गायन में नारी के प्रति नवीन दृष्टिकोण दिखलायी पड़ता है यथा–

"नारी–नारी ना कहियो
नारी लक्समी समान
नारी पीछे नर होत है
प्रल्लाद–किस्नै समान।।"

इन गीतों में नारी कंठ की पूर्ण कमनीयता एवं सरलता विद्यमान रहती है।

कुमाउनी 'संस्कार गीतों' के गायन पर स्त्रियों का एकाधिकार है। इसमें घर में कन्या के जन्म से लेकर उसके विवाह एवं विदाई के तक गीत गाये जाते है। जिनमें कन्या को पराया धन बताकर उसको दूसरे घर चले जाना एक सामाजिक रीति बताया गया है। संस्कार गीतों में नायक नायिका पर रूक्मनी–कृष्ण या राम–सीता का अरोप कर ये गीत गाये जाते हैं। संस्कार गीतों में स्त्री पुत्री, भतिजी, माँ, पत्नी, सास इत्यादि रूपों में आयी है।

मंगलगीतों में विशेषतः कामना गीत 'औछन' गाये जाते है। जिनमें गर्भिणी की स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है। जैसे–

"खै लिया बौज्यू, मनै की इछिया जो
खै लियो बौज्यू बासमती को भात
उड़द की दाल, घिरत भुटटो, दाख दाड़ीमा
छोलिंड़ बिजौरा, कैली कचौरी, लाखो कों सीकारा।।"

विवाहादि शुभ–कार्यों के आरम्भ में ही पांच कन्याओं माँ व बहिनों द्वारा वर या दुल्हन को स्नान करवाना शुभ माना जाता है व इसके मंगलपरक गीत गाए जाते हैं। मातृ–पूजन व कलश–पूजन में भी स्त्रियों का देवी रूप में पूजन किया जाता है। विशेषतः माँ द्वारा बारात प्रस्थान के समय 'पुत्र से दूध का मोल माँगना, कन्या दान सप्तपदी बारात विदाई के गीत बेहद मार्मिक होते हैं। कन्या विदाई के अवसर पर गाये जाने वाले गीत इतने मार्मिक होते हैं कि श्रोता के मानस की सीपी अपने दृगद्वार खोलकर मुक्ताश्रुओं से रोती बालिका का अभिषेक करती जान पड़ती है।

'होली गीतों' में भाभी के मन में देवर के विवाह की कामना को लेकर सुन्दर गीतों की रचना की गई है। यहाँ नारी कहीं भाभी के रूप में आयी है, कहीं कहीं होली में व्यंग्य के माध्यम से स्त्री पात्रों को अपनी भड़ास निकालने का भी सुअवसर प्राप्त हुआ है।

होली गीतों में कहीं प्रवासी पति का इंतजार करती प्रेषितपतिका की मनोदशा का सुन्दरवर्णन किया गया है। तो कही अपने प्रियतम की राह तकती प्रेमिका का।

प्रेमिका कहती है कि मैं अपने आंचल को फाड़कर कागज बनाती हूँ और अपने कॉजल की स्याही बनाकर अपने प्रियतम को पत्र लिखती हूँ।

"काहिन को कागज करि है हों, काहिन करिहैं स्याय।
मेरो पिया निरमोहिया कदि आवे।
फाड़ि अंचला कागज करि हैं, पौछि कॉजल की स्याय।।"

कहीं नायिका कृष्ण को उपालम्भ देती हुई कहती है कि कृष्ण ने जबरदस्ती मेरे कपड़ों में रंग डाल दिया है। वह अबीर–गुलाल लिए गलियों में मतवाला होकर फिर रहा है और कोई भी उसे रोकने वाला नहीं है। कहीं प्रेमिका रूप में चित्रण है तो वह अपने प्रियतम से गुलाल न मलने की प्रार्थना करती है। कहीं वह सखियों से यमुना तट पर होली खेलने चलने को कहती है स्त्री मन की उस स्थिति का चित्रण भी होली गायक करता है जिसमें वह अपने प्रियतम के रूठने पर चिंतित है। कहीं एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि सखी अपना श्रृंगार कर ले होली समाप्त होने को आयी है। तुझे अब शीघ्र ही अपने पिया के घर जाना होगा। होली के अंत में स्त्री का दैवीय रूप में भी चित्रण किया गया है। जिसमें श्रृद्धा का भाव विद्यमान है।

बालगीतों में एक माँ की सन्तान के प्रति मनः स्थिति व स्नेह का

सुन्दर चित्रण किया गया है। भला बालक के प्रति वात्सल्य को एक माँ से अधिक कौन अनुभव कर सकता है।

कुमाउनी लोक गाथायें यहाँ की जनता के आचार–विचार, आस्था–विश्वास, धर्म–परम्परा व संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं, लोक गाथाओं में स्त्री प्रेम गाथाओं की नायिका, साम्राज्यों की संरक्षिका, युद्धों की संवाहिका, धर्म की वाहिका के रूप में चित्रित की गई हैं। प्रत्येक लोक गाथा से किसी न किसी रूप में पहाड़ी नारी की आशा–आकांक्षा, व विश्वास जुड़ा हुआ है। पुरुष प्रधान समाज प्राचीन काल से ही स्त्रियों को अपनी सम्पति समझकर उन पर अत्याचार करता आया है, इसी का एक उदाहरण है– 'मालूशाही।' राजा दुलाशाह व सुनपति शौक द्वारा चित्रशिला घाट पर पूजन के दौरान भावी सन्तान होने पर उनके परस्पर विवाह का संकल्प लेने पर भी शौकों को अपनी बेटी शौक बिरादरी के बाहर दूल्हा ढूँढना पसन्द नहीं आया और वे मालूशाही को मरवाकर हिम शिलाओं के नीचे दबा देते हैं। बेचारी राजुला को जब यह पता चलता है तो वह रोती ही रह जाती है यही नहीं सुनपति शौक धन के लोभ में अपनी बेटी (राजुला) का रिश्ता रिखेपाल हूण से कर देता है, तो गंगूली व राजुली दोनों माँ बेटी का जीवन नरक बन जाता है। राजुला रोती हुई भगवान से विनती करती है कि–

"कैको रे घर झन होवो भुलियो, च्यलि क जनम,
ए कभै झन होयो कौछी राजुली च्यली को जनम।।"

(बहिनो किसी के भी घर लड़की का जन्म न होये। हे भगवान! कभी किसी को लड़की के रूप में जन्म मत देना।)

जब मालूशाह ने हूण देश पर विजय प्राप्त कर राजुला को पा लिया तो शौकों द्वारा विदाई के वक्त घिनौड़ी के खेत में भोज का आयोजन किया व खाने में विष मिलाकर राजुला–मालूशाही और उनके सभी सेवकों बन्धु बान्धवों को मरवा दिया। अजीब है। धर्म व सत्ता के ठेकेदारों की मर्यादा भी जो बेटी को रोता हुआ, मरता हुआ देख सकते हैं,लेकिन हॅसते जीते नहीं देख सकते।

'बफौल गाथा' में स्त्री एक नवीन रूप में हमारे सामने आती है, जो अपने पति हित के लिए स्वामी भक्त बाईस भाई बफौलों की तक हत्या कर सकती है और पति हित के लिए अपनी मान–मर्यादा तक दॉव पर लगाकर अजुवा की रखैल बनने को तक तैयार हो जाती है।

'बरमी कॅवल' गाथा नवीन कौतूहल का सृजन करती है, क्योंकि गाथा के केन्द्रीय पात्र नौ भाई बरमी कॅवल उभयलिंगी हैं, जो कि स्त्रियों के रूप में हिमालय में क्रीडाऍ करते हैं और पुरूषों के रूप में नागलोक पर शासन करते हैं।

'कल्याण सिंह (कल बिष्ट)' और 'गंगनाथ गाथा' में कथा नायक को अपने से उच्च जाति की नायिका से प्रेम करना उनकी मृत्यु का कारण बनता है। कल्याण सिंह अपने जीजा के हाथों मारा जाता है, व गंगनाथ अल्मोड़िया जोशियों के हाथों किन्तु ये दोनों गाथाऍ इस बात पर अवश्य ध्यान केन्द्रित कराती है कि स्त्री वस्तु नहीं व्यक्ति है और उसकी भी स्वतन्त्र सत्ता है, मात्र विवाह ही काफी नहीं विवाह के साथ कुछ आकांक्षाऍ भी जुड़ी होती हैं, नारी के लिए उनका पूरा होना भी आवश्यक है, यदि पति उन्हें पूरा नहीं कर सकता तो स्त्री को उससे मुक्ति पाने का पूरा अधिकार है। इसी प्रकार की गाथा है हुड़की बौल के अन्तर्गत 'स्यूंराजी–प्यूरांजी' जिसमें लूलहंस की बहू मोतिमा रानी अपने ससुरालियों के खिलाफ 'स्यूंराजी बौल' का साथ देती है।

यदि पर्वतीय अंचल में रहने वाले गोप–गोपी (ग्वालों) का जीवन और उनके जीवन में स्त्री का स्थान देखना है तो इसका सबसे अच्छा उदाहरण है 'गौरा–माहेश्वर' (आँठू कथा) जिसमें पार्वती को एक ग्राम बाला के रूप में चित्रित कर ग्राम–बाला के प्रेम व विवाह सम्बन्धी आकांक्षाओं को दर्शाया गया है। यहाँस्त्री हृदय में विद्यमान वात्सल्य का भाव दिखता है। 'ठुलखेल' (पहाड़ी रामायण) में रानी कौशल्या, सुमित्रा व कैकई के माध्यम से लोकगाथाकार ने नारी हृदय की बात्सल्य मनोभावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति की है–

''आब लिया बालकै का रूप
बालक की आवाज सूणी
सबै रानी महल आइन
दसरथ खबर दीछ,
सहर की रानी मनखुसी भैन, फूल की बरीखा बरसा,
रानी फूल की बरीखा बरसा
सहर की छोरी मनखुशी भैन जग–जग–जागला दिया।।''

लक्ष्यवेध जागर वार्ता में लोकगाथाकार द्रौपदी के माध्यम से कन्या की इस व्यथा–कथा का चित्रण करता है, जो उसे पितृ–गृह से छोड़ते वक्त होती है, इसे सामाजिक परम्परा कहें या विडम्बना जिस घर में जन्म लिया पाली पोसी गई वही घर एक दिन लड़की के लिए पराया हो जाता है।

''दुरोपदी लली ढुलढुल रूँछीन,
स्यानी स्यैनीन समजून लागी रें,
सुण इजू दुरूपदी हमरी चेली,
चंलिन लै पर धरै जानूँ हो।''

(लली द्रौपदी ढुल–ढुल रोने लगी तो सयानी स्त्रियॉ उसे समझाने लगीं। पुत्री सयानी लड़की को तो दूसरे के ही घर जाना होता है।)

'रमौल गाथा' में स्त्रियों (इजुला–बिजुला) के सौतिया डाह को दिखाया गया है। जिस सौतिया डाह से देवियॉ न बच पायी हैं, स्त्रियॉ क्या बच पाती। इजुला के से हके कारण बिजुला अपने चार महीने के गर्भ सिदुवा–विदुवा को कुंजानी पातल की झाड़ी में फैंक देती हैं। किन्तु वे जोगियों के गुरू नीलपाल द्वारा बचा लिए गए।

'काइनर' की कथा कुन्ती की कथा से लगभग मिलती जुलती है, झहराज व जिया की पुत्री काइनर अपने माता–पिता से कुंभ स्नान करने की इच्छा व्यक्त करती है, किन्तु परिवारी जनों के मना करने पर भी वह नहीं मानती है और कुंभ स्नान को हरिद्वार चल देती है। काइनर को अर्द्धरात्रि को स्नान का अवसर मिलता है, वह स्नान करती है, गंगा में लहर उठती है, अर्द्धरात्रि में देवीय प्रकाश से काइनर स्नान करते वक्त गर्भवती हुई और चौदहवें मास में उससे बीर अवतारी पुरूष हरू पैदा हुए।

'हरू सैम' गाथा में हरू द्वारा ऊँची चोटी पर बॉसुरी बजाने पर ऑछरियॉ उसके प्राण हर लेती हैं, तो इसकी माँ काइनर स्वर्ग से उतर आती है अपने पुत्र की रक्षा करती है उसे जिन्दा कर सैम की मुक्ति का रास्ता बताती है। 'राना रावत गाथा' में माँ बैरागीशिला जब अपने पुत्र को राजा गरूड़ ज्ञानचंद के आदेश का पालन करने युद्ध के लिए प्रस्थान करते हुए देखती है तो माँ का हृदय द्रवित होने लगता है, वह रोते हुए कहती है कि मेरे लाल! तेरी उम्र अभी मात्र बारह साल है तू क्या युद्ध लड़ेगा। फिणिहाठ के मेले में जब कन्नौजियों के हाथों राना रावत कन्नौजियों की सुन्दरी तिरिंया के कारण मारा जाता है तो कन्नौजी राना रावत की गर्भवती पत्नी मोतिमा को बल पूर्वक उठा ले जाते हैं, रास्ते में मोतिमा का गर्भ गिर जाता है, जब वन कन्याऍ उस रोते हुए शिशु को देखती है तो बात फैलती है और बूढ़ी बैरागी शिला उसे उठा लाती है और

पालन करती है यही बालक बड़ा होकर सोबा रावत नाम से पैक (योद्धा) बनता है।
कुमाउनी परिनिष्ठित साहित्य की परम्परा यहाँ पं0 लोकरत्न पन्तगुमानी से मिलती है। कविवर गुमानी की रचनाओं में उनके द्वारा किया गया विधवा वर्णन अत्यन्त मार्मिक है यथा– "हालिया हाथ पड़ो बड़ा कठिनले है गेछ दिन दोफरी

बाऊँ बल्द मिलोछ एक दिजिय को कॉ जाँ मैं दैणा हुणी नस्यूड़ा बिना।
माणो भट्ट गुरूंश को खिचड़ी सूं पैंचों लग नीमिलो,
मैं ढोलासू हाय काल हराणो कॉ जौं क्या धाना करूँ।।"

(बड़ी कठिनता से हलिया मिला उसकी खोज खबर करते–करते दोपहर हो गई, किसी से बायाँ बैल भी बड़ी मुश्किल से मिल पाया अब में दाहिने बैल की खोज में नस्यूड़े (हल के फल) के बिना कहाँ जाँऊ। एक माणा गद्य या भट्ट तक किसी से उधार नहीं मिला मुझ विधवा के लिए काल तक खो गया है, मैं अब कहाँ जाऊँ क्या करूँ!)
पर्वतीय समाज में विधवा सबकी दया की पात्र होती है, पूरा गांव उसकी सहायता करना अपना कर्तव्य मानता है, जब तक कि उसकी सन्तान (बेटा) खुद हल जोतने लायक नहीं हो जाता तब तक उसकी खेती करने में सहायता करना गाँव का धर्म माना जाता है, फिर भी विधवा का जीवन कम नारकीय नहीं होता है।
कवि गुमानी स्त्री की उस मनस्थिति का भी भावपूर्ण चित्रण करते हैं, जिसमें अतिथि (मेहमान) का आगमन कभी–कभी उसके लिए दुःखदायी भी होता है–

''नै नायो नै झाड़ झाड़ो
नै उखल कुटो पानी को रीतो घड़ो।
केड़ो एक नै लाकड़ी को
नै चूल्हा का ख्वार में पाणीं पड़ो।
ए लै कथें बटि कलमुवा
पौणा लगै ऐ मरीं
हाय में ढोला सूँ काल हराणो
काँ जूँ के धाना करूँ।''

(ना नहाया ना ही झाड़ू पोछा किया, ना ही उखल कूटा, पानी का घड़ा भी नहीं भरा। एक भी टुकड़ा लकड़ी भी न जुटा पायी ना ही चूल्हे की लिपायी की ऐसे वक्त में न जाने कहाँ से कलमुए मेहमान आ मरे हाय मुझ बेचारी के लिए काल भी खो गया है। अब में कहाँ जाऊँ का काम युक्ति करूँ)।
शिवदत्त सती द्वारा अपनी पुत्री गोपी की मृत्यु के बाद उसकी स्मृति में रचे गए 'बाल विधवा गोपी देवी के स्वप्न गीत' में पहाड़ की विधवा नारी के नारकीय जीवन का चित्रण किया गया है। लेखक का कहना है कि लड़की के विधवा होने पर उसके माता–पिता और ससुराली जनों का जीना दूभर हो जाता है, और विधवा को समाज बहुत बुरी नजर से देखता है। अतः विधवा लड़की के जीने से तो मरना अच्छा है। साथ ही यह गीत स्त्री द्वारा न रचे होने पर भी स्त्री संवेदना का प्रमाणिक साक्ष्य है, और सम्भवतः यह कुमाउनी साहित्य में किसी कवि द्वारा अपनी पुत्री की मृत्यु पर रचा गया सर्वश्रेष्ठ शोकगीत भी हों। इसे पढ़ते हुए निराला की 'सरोज स्मृति' की बरबस याद आ जाती है।
गौरी दत्त पाण्डे 'गौर्दा' ने अपने काव्य को व्यंग्यात्मक रूप देते हुए सामाजिक अव्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था के नियामकों की बड़ी खिंचाई की है। 'होली' को आधार बनाकर उन्होंने दो गीत 'होलि कसिकै खेलू' (होली कैसे खेलूं) और 'होली खेलूं' के माध्यम से सामाजिक विद्रूपता पर करारा व्यंग्य किया है। ''मैं होली कैसे खेलूं मुझे बहुत शर्म आ रही है। मेरे तन पर फटे हुए कपड़े तक नहीं हैं, मेरे पति पैंसठ बरस के बूढ़े हो चुके हैं और मैं सोलह बरस की लड़की हूँ। घर में बच्चों के मुँह चलाने के लिए अन्न का दानाभी नहीं है। मुझ से पहले मेरी तीन सौतनें मर चुकी हैं मैं चौथे विवाह की पत्नी हूँ मेरे पति बिस्तर में मेरी तरफ, अपनी झुकी हुई कमर पलटा देते हैं, तो मेरे मन की सभी कामनाएँ मन के भीतर ही मर जाती हैं। मैं इन रंगीन चिथड़ों से अपने को ढक कर क्या करूँ चिन्ता से मेरे मुख पर झाइयाँ पड़ गई हैं। अब इन गालों पर गुलाल मलने से क्या फायदा होगा।'
गौर्दा समाज की उस विकृति से आक्रोशित हैं जिसमें धर्म की आड़ में किसी किशोरी का विवाह उसके पिता से बड़ी उम्र के व्यक्ति से कर दिया जाता है। और समाज उसका विरोध नहीं करता। स्त्री जीवन की एकविडम्बना यह भी है कि वह प्रत्येक स्थिति में पति की इच्छा का पालन करे, चाहे वह अपनी उम्र की अधिकता के कारण विवाह मण्डप में ही प्राण त्यागने को तैयार क्यों न हो।
पहाड़ की स्त्री की आवश्यकताएँ भी सीमित हैं, (कुछ ज्यादा नहीं माँगती वह अपने पति) से रोटी–कपड़ा, मकान व सम्मान के सिवा यदि यह भी नहीं मिलता है तो उसे अपना जीवन निरर्थक लगने लगता है। जिससे कहीं वह आक्रोशित दिखती है, तो कहीं वह सिसकती किन्तु ऐसी विषम परिस्थिति में भी वह अपनी मार्यादा नहीं खोती किन्तु तिलमिला अवश्य जाती है।

यथा–

'होली खेलूं' कविता का भावार्थ देखिए– ''होली किससे खेलूं'। पति की हड्डियों से लागों की पत्नियाँ सजी रहती हैं, और मेरे कपड़ों में जगह–जगह 'पैबन्द' (टल्ले) लगे हुए हैं। भूख से रोते हुए बच्चे मुझे नौंच खाने को तैयार हैं। पति कानून पास करके भी अपनी सारी होश गधेरे में बहाकर घर में बैठे हुए हैं।'' गौर्दा की 'तुम बड़ी भाग छा' और 'जावो–जाओ' कविता भी स्त्री संवेदना का प्रतिबिम्ब है।
कवि गौर्दा ने अपनी कविता 'सुणो चेली ब्वारियो' में कुमाँऊ अंचल की महिलाओं को फैशन की अतिशयता से दूर रहने का संदेश दिया है। 'चेलिक डाड़' जैसी कविता लिखकर वे अनमेल विवाह का विरोध करते हुए कहते हैं, कि पैंसे के लोभ में बेटी का अनमेल विवाह करना उसका विवाह न होकर उसकी हत्या है।
बाबू चन्द्र सिंह तड़ागी अपनी कृति 'चन्द्रशैली' में 'स्त्री शिक्षा' नामक लम्बी कविता में स्त्री शिक्षा के प्रबल हिमायती के रूप में दृष्टिगत होते हैं, उनका मानना है कि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों को शिक्षा की अधिक आवश्यकता है, क्योंकि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों को दो घरों को संभालना पड़ता है।
श्री बचीराम श्री कृष्ण पन्त (1889–1958) का काव्य भी स्त्री समाज का पक्षधर बनकर उभरा है, वे स्त्री–शिक्षा व सम्मान के बड़े तरफदार रहे हैं। उनकी कविता 'जनता से विनय' के अनुसार–

"सैणिन को सनमान, सदै हुण चैंछ।
जैं आदर ऊँ पानी पौंछि, वै लक्ष्मी रैंछ।
ये बातों परै सब ध्यान धरिया।
चेलि कणि बेची बेर, बुढ़ा झन दियौ,
अनमेल विवाह कणी दूर हटै दिया।
भली रीतन चलै यो दुःख हरिया।।"

(स्त्रियों का सम्मान सदा होना चाहिए। जहाँ वे सम्मान पाती हैं, वहाँ लक्ष्मी रहती हैं। इन बातों का सभी ध्यान रखना। लड़की को बेचकर बूढ़े को मत देना (बूढ़े से विवाह मत करना) अनमेल विवाह को दूर हटाना, अच्छी परम्परा चलाकर यह दुःख मिटाना।) पन्त जी की 'ओइजा' कविता समाज में कन्या के जन्म को अपशगुन मानने वालों पर करारा व्यंग्य करती है, साथ ही एक स्त्री के जन्म होने पर दूसरी स्त्री के दुखी होने को कवि सबसे बड़ा अभिशाप मानता है।

नारी है, 'नारी' भल नी चैं
यो कस भै अन्धेर
समझ नि ऐ आजी तक त्वे कैं
जतकाई है बेर।

बिन देवी द्यपता लग नीभै
देवी जग की मूल
कन्या हुण पर शोक मनूणो
यो भै भारी भूल।।

अया बटि तौ बाबू है गे
बाबू में द्यखि खार
यसी अक्ल भै मति मारी गै
नी द्यखना संसार।।

हरिदत्त खनूलिया के काव्य में स्त्री का उदात्त रूप में चित्रण मिलता है वे स्त्री को चराचर में व्याप्त मानते हैं–

नारी तू महान छे, घर की पछ्याण छै,
आँचल तेरो दूध छू, पालना में पूत छू।
तेरो अश्रु धार में, पुकार में हुँकार में,
यो संसार बगि सकछँ, यह आसमान फटि सकूँ।।

खनूलिया जी की कविता 'हरूली हिमानी' में कुमाऊँ के पाली पछाँऊ के मैठानी गॉव की लड़की हिरूली को मुख्य विषय बनाकर पहाड़ी नारी के साहस व वीरता का चित्रण हुआ है।
शेर सिंह बिष्ट 'अनपढ़' की कविता 'मैं कैसिक रूँल' प्रवासी प्रियतम का इन्तजार करती प्रेमिका की विरह व्यथा का वर्णन किया गया है।
उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि कुमाऊनी साहित्य में स्त्री विमर्श के सभी पहलुओं को स्थान मिला है। आवश्यकता है उसके मूल्यांकन की।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. प्रयाग जोशी,कुमाउनी लोक गाथाऍ– I, प्रकाशक जुगल किशोर एण्ड कम्पनी राजपुर रोड, देहरादून (1971)
2. प्रयाग जोशी,कुमाउनी लोक गाथाऍ– II, प्रकाशक जुगल किशोरएण्ड कम्पनी राजपुर रोड, देहरादून (1971)
3. डॉ प्रयाग जोशी, कुमाँऊ गढ़वाल की लोक गाथाओं का विवेचनात्मक अध्ययन, प्रकाश बुक डिपो बरेली
4. डॉ0शिवानन्द नौटियाल, उत्तराखण्ड की लोक कथाऍ, अल्मोड़ा बुक डिपो।
5. डॉ0 कृष्णानन्द जोशीं, रूपहले शिखरों के सुनहरे गीत, प्रकाश बुक डिपो बरेली।
6. डॉ0 प्रयाग जोशी, कुमाँऊ गढ़वाल की लोक गाथाऍ, प्रकाश बुक डिपो बरेली।
7. जुगल किशोर पेटशाली तथा कुंजवाल, कुमाँऊ के संस्कार गीत, तक्षशिला प्रकाशन
8. डॉ0 त्रिलोचन पाण्डे, कुमाउनी लोक साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन प्रकाशन
9. बलदेवप्रसाद शर्मा, सतियों का सत्ए वीर गाथा प्रकाशन, दोगड्डा गढ़वाल।
10. कृष्णबलदेव उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन प्राइवेट लि0
11. डॉ0उर्बादत्त उपाध्याय, कुमाँऊ की लोक गाथाओं का साहित्यिक और सांस्कृतिक अध्ययन, प्रकाश बुक डिपो बरेली।
12. डॉ0प्रयाग जोशी, कुमाउनी लोक गाथाऍ तृतीय भाग, प्रकाश बुक डिपो बरेली।
13. डॉ0 देवसिंह पोखरिया, कुमाउनी लोकसाहित्य तथा कुमाउनी साहित्य, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, 1994
14. डॉ0 देवसिंह पोखरियाए न्यौली सतसयी, तराण प्रकाशन, अल्मोड़ा ज्ञानोदय प्रकाशन, नैनीताल, 1986, 2005